**International Journal of Social Science and Humanities**
**www.humanitiesjournals.com**
**Online ISSN: 2664-8628**
**Received: 12-05-2026, Accepted: 12-06-2026, Published: 27-06-2026**
**Volume 8, Issue 2, 2026, Page No. 247-249**

# हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति का अर्न्तसम्बन्ध: एक इको–फेमिनिस्ट अध्ययन

**डॉ. निधि उप्रेती**
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय, देहरादून, उत्तराखंड, भारत
**DOI:** https://doi.org/10.66856/ijssh.2026.8.2.8106

**सारांश**
वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट और लैंगिक असमानता वैश्विक स्तर पर गंभीर चिंताओं के विषय हैं। जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, जैव–विविधता का क्षरण तथा सामाजिक–सांस्कृतिक विषमताएँ मानव सभ्यता के समक्ष अनेक चुनौतियाँ प्रस्तुत कर रही हैं। ऐसी स्थिति में इको–फेमिनिज्म एक महत्वपूर्ण वैचारिक दृष्टिकोण के रूप में उभरता है, जो स्त्री और प्रकृति के मध्य अन्तर्सम्बन्धों को समझने का प्रयास करता है। इको–फेमिनिस्ट चिंतन यह प्रतिपादित करता है कि स्त्री और प्रकृति दोनों के शोषण का मूल कारण पितृसत्तात्मक एवं प्रभुत्ववादी सत्ता–संरचनाएँ हैं। हिन्दी साहित्य में प्रकृति और स्त्री दोनों को संवेदना, सृजन, करुणा तथा जीवन–संरक्षण के प्रतीकों के रूप में चित्रित किया गया है।
प्रस्तुत शोध–पत्र में हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों का इको–फेमिनिस्ट दृष्टि से अध्ययन किया गया है। विशेष रूप से महादेवी वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा तथा चित्रा मुद्गल के साहित्य के साथ–साथ उत्तराखण्डी लोकसाहित्य और चिपको आन्दोलन का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति का सम्बन्ध केवल प्रतीकात्मक नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक तथा पारिस्थितिक यथार्थ से गहराई से जुड़ा हुआ है। यह शोध पर्यावरणीय न्याय तथा लैंगिक समानता के बीच अन्तर्सम्बन्धों को समझने की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

**मूल शब्द:** इको–फेमिनिज्म, स्त्री–विमर्श, प्रकृति, हिन्दी साहित्य, पर्यावरणीय चेतना, उत्तराखण्डी लोकसाहित्य, चिपको आन्दोलन।

## प्रस्तावना
इक्कीसवीं शताब्दी में पर्यावरणीय संकट और स्त्री–अधिकारों का प्रश्न वैश्विक विमर्श के केन्द्र में है। एक ओर जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जल–संकट और जैव–विविधता का विनाश मानव अस्तित्व के लिए चुनौती बन रहे हैं, वहीं दूसरी ओर लैंगिक असमानता, स्त्री–शोषण तथा सामाजिक विषमता भी गंभीर प्रश्न बने हुए हैं। इन दोनों समस्याओं को पृथक–पृथक देखने के स्थान पर इको–फेमिनिज्म उन्हें एक साझा वैचारिक धरातल पर रखता है।
इको–फेमिनिज्म का मूल तर्क यह है कि स्त्री और प्रकृति दोनों के शोषण का आधार एक ही सत्ता–संरचना है। जिस प्रकार प्रकृति को मानव–केन्द्रित विकास की अवधारणा के अंतर्गत संसाधन मानकर उसका दोहन किया गया है, उसी प्रकार स्त्री को भी सामाजिक संरचनाओं में नियंत्रित और अधीनस्थ बनाकर देखा गया है।
हिन्दी साहित्य में प्रकृति केवल सौन्दर्य का विषय नहीं है। वह जीवन, संस्कृति, संवेदना और मानवीय अस्तित्व की आधारभूमि है। इसी प्रकार स्त्री भी केवल एक पात्र नहीं, बल्कि सामाजिक अनुभव, संघर्ष और सृजनशीलता की प्रतिनिधि है। हिन्दी साहित्य के अनेक रचनाकारों ने स्त्री और प्रकृति के बीच गहरे सम्बन्ध को अभिव्यक्त किया है। विशेष रूप से महादेवी वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा और चित्रा मुद्गल के साहित्य में यह सम्बन्ध अत्यंत प्रभावशाली रूप में दिखाई देता है।[3]
भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में पृथ्वी को माता, नदियों को देवी तथा वृक्षों को जीवनदाता माना गया है।[4] यह दृष्टि प्रकृति के प्रति श्रद्धा और संरक्षण की चेतना का निर्माण करती है। उत्तराखण्डी लोकसाहित्य तथा चिपको आन्दोलन इसी सांस्कृतिक दृष्टि के महत्वपूर्ण उदाहरण हैं, जहाँ स्त्री और प्रकृति का सम्बन्ध जीवन के वास्तविक अनुभवों से जुड़ा हुआ दिखाई देता है।[5]
प्रस्तुत शोध–पत्र हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति के इसी अर्न्तसम्बन्ध का इको–फेमिनिस्ट परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करता है।

## शोध के उद्देश्य
- इको–फेमिनिज्म की अवधारणा और उसके सैद्धान्तिक आधार का अध्ययन करना।
- हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति के सम्बन्धों का विश्लेषण करना।
- स्त्री एवं प्रकृति के समान शोषण की संरचनाओं की पहचान करना।
- उत्तराखण्डी लोकसाहित्य में स्त्री और प्रकृति की भूमिका का अध्ययन करना।
- चिपको आन्दोलन के इको–फेमिनिस्ट आयामों का मूल्यांकन करना।
- समकालीन पर्यावरणीय संकटों के संदर्भ में हिन्दी साहित्य की प्रासंगिकता को रेखांकित करना।

## शोध–पद्धति
प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक तथा व्याख्यात्मक शोध–पद्धति पर आधारित है। शोध में हिन्दी साहित्य की चयनित कृतियों, स्त्री–विमर्श संबंधी ग्रन्थों, इको–फेमिनिस्ट सिद्धान्तों तथा पर्यावरणीय अध्ययन से सम्बन्धित द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। अध्ययन में मुख्यतः पाठ–विश्लेषण पद्धति अपनाई गई है, जिसके माध्यम से साहित्यिक कृतियों में स्त्री और प्रकृति के सम्बन्धों की व्याख्या की गई है। साथ ही उत्तराखण्डी लोकसाहित्य और चिपको आन्दोलन को सांस्कृतिक अध्ययन के दृष्टिकोण से भी देखा गया है।[6]

## इको–फेमिनिज्म : अवधारणा एवं सैद्धान्तिक आधार
इको–फेमिनिज्म शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम फ्रांसीसी चिंतक फ्रांकोइस द' ओबोन ने 1974 में किया था।[7] उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि आधुनिक विकास मॉडल ने प्रकृति और स्त्री दोनों को शोषण का विषय बनाया है। उनके अनुसार पर्यावरणीय संकट और स्त्री–दमन परस्पर सम्बद्ध हैं।

कैरेन जे. वारेन इको–फेमिनिज्म की प्रमुख सिद्धांतकारों में मानी जाती हैं। उनके अनुसार स्त्री और प्रकृति के मध्य स्थापित अधीनस्थ सम्बन्ध किसी प्राकृतिक व्यवस्था का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक सत्ता–संरचनाओं द्वारा निर्मित हैं।[8] वारेन का मत है कि जब तक प्रभुत्ववादी सोच का विघटन नहीं होगा, तब तक न तो स्त्री–मुक्ति सम्भव है और न ही पर्यावरण–संरक्षण।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में वंदना शिवा ने इको–फेमिनिज्म को नई दिशा प्रदान की। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि विकास की वर्तमान अवधारणा प्रकृति को उपभोग की वस्तु के रूप में देखती है, जबकि पारंपरिक समाजों में प्रकृति को जीवन–सहयोगी माना जाता था। उनके अनुसार ग्रामीण महिलाओं का जीवन जल, जंगल और जमीन से गहरे रूप में जुड़ा होता है; इसलिए पर्यावरणीय विनाश का सबसे अधिक प्रभाव उन्हीं पर पड़ता है।

इको–फेमिनिज्म केवल एक सैद्धान्तिक अवधारणा नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संतुलन और मानवीय सह–अस्तित्व की व्यापक दृष्टि प्रस्तुत करता है। यह मनुष्य और प्रकृति के बीच प्रभुत्व के बजाय सहभागिता और सहजीवन की स्थापना पर बल देता है।

### भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में स्त्री और प्रकृति

भारतीय सांस्कृतिक चेतना में स्त्री और प्रकृति को समान रूप से सृजन, संरक्षण तथा जीवन के आधार के रूप में देखा गया है। वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक पृथ्वी को माता, नदियों को देवी तथा वनस्पतियों को जीवनदायिनी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।[9] यह दृष्टिकोण प्रकृति के प्रति श्रद्धा और संरक्षण की भावना को जन्म देता है। भारतीय परम्परा में प्रकृति को केवल उपभोग की वस्तु नहीं माना गया, बल्कि उसके साथ आत्मीय सम्बन्ध स्थापित किया गया है।[10]

ऋग्वेद, अथर्ववेद तथा पुराणों में पृथ्वी के प्रति कृतज्ञता का भाव स्पष्ट रूप से व्यक्त हुआ है। भारतीय संस्कृति का यह पर्यावरणीय दृष्टिकोण आधुनिक इको–फेमिनिस्ट विचारधारा के अनेक सिद्धान्तों से साम्य रखता है। स्त्री और प्रकृति दोनों को जीवन–संरक्षण की शक्ति मानना भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि की विशिष्टता है।

### हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति का अन्तर्सम्बन्ध

### (क) महादेवी वर्मा : करुणा, सह–अस्तित्व और प्रकृति

महादेवी वर्मा के साहित्य में प्रकृति केवल सौन्दर्य का माध्यम नहीं, बल्कि संवेदना का विस्तार है। उनके गद्य–साहित्य विशेषतः मेरा परिवार में पशु–पक्षियों और प्रकृति के प्रति जो आत्मीयता दिखाई देती है, वह इको–फेमिनिस्ट चेतना का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

महादेवी वर्मा मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्ध को पारस्परिक सहयोग तथा करुणा पर आधारित मानती हैं। उनके संस्मरणों में गिल्लू, नीलकंठ, सोना और गौरा जैसे पात्र केवल जीव–जंतु नहीं हैं, बल्कि जीवन के साझेदार हैं।

इको–फेमिनिस्ट दृष्टि से देखा जाए तो महादेवी वर्मा का साहित्य प्रभुत्ववादी सोच के स्थान पर सह–अस्तित्व की चेतना को स्थापित करता है। उनके यहाँ प्रकृति और स्त्री दोनों संवेदनशील सत्ता के रूप में उपस्थित हैं।

### (ख) मैत्रेयी पुष्पा रू ग्रामीण स्त्री और भूमि का सम्बन्ध

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन, स्त्री–अस्मिता और प्राकृतिक परिवेश का गहरा सम्बन्ध दिखाई देता है। इदन्नमम् तथा अन्य कृतियों में स्त्री का जीवन जल, जंगल और जमीन से जुड़ा हुआ है।[3]

ग्रामीण स्त्री प्रकृति से केवल भावनात्मक रूप से नहीं, बल्कि अस्तित्वगत स्तर पर जुड़ी होती है। उसका श्रम, आजीविका और सामाजिक जीवन प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर होता है। इसलिए पर्यावरणीय संकट का प्रभाव सबसे पहले उसी पर पड़ता है।

मैत्रेयी पुष्पा की रचनाओं में स्त्री का संघर्ष केवल सामाजिक बन्धनों के विरुद्ध नहीं है, बल्कि उन विकासवादी प्रक्रियाओं के विरुद्ध भी है जो प्रकृति और मनुष्य दोनों को क्षति पहुँचाती हैं। [4]

### (ग) चित्रा मुद्गल : विकास, विस्थापन और पर्यावरण

चित्रा मुद्गल के साहित्य में विकास की अंधी दौड़ से उत्पन्न सामाजिक और पर्यावरणीय संकटों का यथार्थपरक चित्रण मिलता है। आवाँ जैसे उपन्यासों में श्रमिक जीवन, विस्थापन और संसाधनों पर नियंत्रण की समस्याएँ प्रमुखता से उभरती हैं।[5]

इको–फेमिनिस्ट दृष्टिकोण से चित्रा मुद्गल का साहित्य यह संकेत करता है कि विकास का असंतुलित मॉडल स्त्री, श्रमिक वर्ग तथा प्रकृति—तीनों को प्रभावित करता है। उनके साहित्य में सामाजिक न्याय और पर्यावरणीय न्याय का अर्न्तसम्बन्ध स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

### उत्तराखण्डी लोकसाहित्य में स्त्री और प्रकृति

उत्तराखण्ड का लोकसाहित्य प्रकृति और मानवीय जीवन के अद्भुत सामंजस्य का परिचायक है। यहाँ के लोकगीतों में पर्वत, नदियाँ, जंगल, ऋतुएँ तथा कृषि–जीवन स्त्री के अनुभवों के साथ गहरे रूप में जुड़े हुए हैं।[6]

गढ़वाली और कुमाऊँनी लोकगीतों में स्त्री का जीवन प्रकृति के साथ निरन्तर संवाद करता हुआ दिखाई देता है। पर्वतीय क्षेत्रों में जल लाना, पशुपालन करना, चारा संग्रह करना तथा कृषि कार्य करना मुख्यतः महिलाओं की जिम्मेदारी रही है। परिणामस्वरूप उनका जीवन प्राकृतिक संसाधनों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। लोकगीतों में प्रकृति केवल पृष्ठभूमि नहीं है; वह स्त्री की साथी, संवेदना की सहभागी तथा जीवन–संघर्ष की सहयात्री है। यही कारण है कि पर्यावरणीय संकट का दर्द भी लोकसाहित्य में प्रतिध्वनित होता है।[7]

उत्तराखण्डी लोकसाहित्य इस बात का प्रमाण है कि पर्यावरण संरक्षण की चेतना केवल आधुनिक विचार नहीं है, बल्कि लोकसंस्कृति में भी गहराई से विद्यमान रही है।

### चिपको आन्दोलन : एक इको–फेमिनिस्ट परिप्रेक्ष्य

चिपको आन्दोलन भारतीय पर्यावरणीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है। सन् 1970 के दशक में उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में प्रारम्भ हुए इस आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य वनों की अंधाधुंध कटाई का विरोध करना था।[8]

इस आन्दोलन की विशेषता यह थी कि इसमें महिलाओं ने अग्रणी भूमिका निभाई। उन्होंने वृक्षों को आलिंगनबद्ध कर कटाई का विरोध किया। यह केवल पर्यावरणीय आन्दोलन नहीं था, बल्कि जीवन, आजीविका और सामाजिक अस्तित्व की रक्षा का संघर्ष भी था।

ग्रामीण महिलाओं ने अनुभव किया कि जंगलों के विनाश से जल–स्रोत सूख रहे हैं, मिट्टी का कटाव बढ़ रहा है और दैनिक जीवन कठिन होता जा रहा है। इसलिए उनका संघर्ष प्रकृति और जीवन दोनों की रक्षा के लिए था।[9]

वंदना शिवा ने चिपको आन्दोलन को इको–फेमिनिस्ट चेतना का भारतीय स्वरूप माना है। उनके अनुसार यह आन्दोलन दर्शाता है कि स्त्री और प्रकृति के बीच का सम्बन्ध केवल सांस्कृतिक नहीं, बल्कि जीवन–व्यवस्था का आधार है।[10]

### समकालीन प्रासंगिकता

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, जैव–विविधता का क्षरण, जल–संकट और पर्यावरणीय असंतुलन वैश्विक चुनौतियाँ बन

चुके हैं। इन परिस्थितियों में इको–फेमिनिस्ट दृष्टिकोण यह समझने में सहायता करता है कि पर्यावरणीय संकट केवल वैज्ञानिक या तकनीकी समस्या नहीं है, बल्कि सामाजिक न्याय का प्रश्न भी है।

हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन हमें यह सिखाता है कि पर्यावरण संरक्षण तभी प्रभावी हो सकता है जब उसमें मानवीय संवेदना, सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक समानता को भी शामिल किया जाए।

## निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिन्दी साहित्य में स्त्री और प्रकृति का सम्बन्ध अत्यन्त गहरा, बहुआयामी और जीवन्त है। इको–फेमिनिस्ट दृष्टिकोण से यह सम्बन्ध केवल प्रतीकात्मक नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और पारिस्थितिक यथार्थ से जुड़ा हुआ है।

महादेवी वर्मा के साहित्य में करुणा और सह–अस्तित्व की चेतना, मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में ग्रामीण स्त्री और प्रकृति का सम्बन्ध तथा चित्रा मुद्गल की रचनाओं में विकास और विस्थापन के प्रश्न इस सम्बन्ध को विभिन्न स्तरों पर अभिव्यक्त करते हैं। वहीं उत्तराखण्डी लोकसाहित्य और चिपको आन्दोलन स्त्री और प्रकृति के वास्तविक जीवन–आधारित सम्बन्धों को प्रमाणित करते हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि स्त्री–मुक्ति और पर्यावरण–संरक्षण परस्पर सम्बद्ध प्रक्रियाएँ हैं। हिन्दी साहित्य इन दोनों के बीच संवाद स्थापित करते हुए एक अधिक न्यायपूर्ण, संवेदनशील और पर्यावरण–सम्मत समाज की कल्पना प्रस्तुत करता है।

## संदर्भ


1. Françoise d'Eaubonne, Le Féminisme ou la Mort, Pierre Horay, Paris, 1974, p. 213.
2. Karen J. Warren, Ecofeminist Philosophy: A Western Perspective on What It Is and Why It Matters, Rowman & Littlefield Publishers, Maryland, 2000, p. 46.
3. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 2018, पृ. 35।
4. वासुदेवशरण अग्रवाल, भारतीय संस्कृति के आधार, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2012, पृ. 164।
5. Vandana Shiva, Staying Alive: Women, Ecology and Development, Kali for Women, New Delhi, 1988, p. 38.
6. Julian H. Steward, Theory of Culture Change: The Methodology of Multilinear Evolution, University of Illinois Press, Urbana, 1955, p. 30.
7. Françoise d'Eaubonne, Le Féminisme ou la Mort, Pierre Horay, Paris, 1974, p. 214.
8. Karen J. Warren, Ecofeminist Philosophy: A Western Perspective on What It Is and Why It Matters, Rowman & Littlefield Publishers, Maryland, 2000, p. 52.
9. वासुदेवशरण अग्रवाल, भारतीय संस्कृति के आधार, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2012, पृ. 164।
10. हजारीप्रसाद द्विवेदी, भारतीय संस्कृति की रूपरेखा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 112।
11. महादेवी वर्मा, मेरा परिवार, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2020, पृ. 12।
12. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2018, पृ. 27।
13. मैत्रेयी पुष्पा, इदन्नमम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 94।
14. प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. 88।
15. चित्रा मुद्गल, आवाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017, पृ. 121।
16. गोविन्द चातक, गढ़वाली लोकगीत रू सांस्कृतिक अध्ययन, उत्तराखण्ड साहित्य अकादमी, देहरादून, 2011, पृ. 73।
17. शेरसिंह बिष्ट, कुमाऊँनी लोकसंस्कृति और लोकसाहित्य, अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा, 2014, पृ. 102।
18. Vandana Shiva and R. Holla & Bhar, "The Chipko Movement: A People's History", The Ecologist,1991:23(3):45–52.
19. Bina Agarwal, Gender and Green Governance, OÛford University Press, New Delhi, 2010, p. 78.
20. Vandana Shiva, Staying Alive: Women, Ecology and Development, Kali for Women, New Delhi, 1988, p. 38.